International Research Journal of Human Resource and Social Sciences
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
Impact Factor 6.924 Volume 9, Issue 10, October 2022
Website- www.aarf.asia, **Email** : editoraarf@gmail.com

दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में मूल्य एवं नैतिक मूल्य मीमांशा

शोधार्थिनी– नूतन कुमारी एवं डॉ0 विभा चौहान (शिक्षा विभाग)
जे0एस0 यूनिवर्सिटी, शिकोहाबाद

समीक्षाः–

भारत में मूल्यों को अधिक महत्व दिया जाता है। मूल्यों से मानव जीवन शान्तिपूर्ण,स्थायित्व, आध्यात्मिक, कल्पनात्मक अभिव्यक्ति से ओत–प्रोत होता है। इसके लिएपारिवारिक सम्बन्ध अधिक घनिष्ठ तथा आदर सम्मान का भाव रहना आवश्यक है, जिससेमानव जीवन सुखमय व आनन्दमय रहे।

भारत जैसे उप–महाद्वीप में किसी भी समुदाय या धर्म का अवलोकन करने सेविदित होता है कि लगभग सभी धर्मों एवं समुदायों में इस प्रकार के मूल्यों को महत्व दिया जाता है। भारत में सदियों से योग एवं प्राणायाम का अभ्यास किया जाता रहा है। आधुनिकयुग की पीढ़ी भी योग एवं प्राणायाम में रुचि ले रही है तथा अभ्यास भी कर रही है। ईश्वरकी प्रार्थना प्रतिदिन की जाती है। भारत में सभी व्यक्ति अपना दैनिक कार्य आरम्भ करनेसे पूर्व सूक्ष्म प्रार्थना करते हैं। घर तथा परिवारों में प्रातः तथा सांयकाल को प्रार्थना करतेहैं।

आज भी भारत में जीविकोपार्जन के साधन एवं स्रोतों की पूजा करते हैं। एकनृतक तथा कलाकार मंच पर चढ़ते समय उसको नमन करता है और संगीत वादक अपनेसाज को नमन

© Associationof Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

करता है। परीक्षा में छात्र प्रश्न–पत्र को नमन करते हैं। इसी प्रकार कृषकहल तथा अन्य कृषि यन्त्रों को नमन करता है। ड्राइवर तथा रिक्शा चालक भी कार्य शुभारम्भसे पूर्व नमन करते हैं। यह भारतीय संस्कृति का आचरण है। अधिकांश सभी प्रतिदिन केकार्य का शुभारम्भ इसी प्रकार करते हैं।

पाश्चात्य मूल्यों में व्यक्तिवाद अधिक है जबकि भारत में पारिवारिक सामाजिकतथा धार्मिक प्रवृत्ति आज भी विद्यमान है। अपनी व्यक्ति इच्छाओं के लिए इनका उल्लंघनकरना कठिन होता है। पश्चिमी देशों के प्रभाव के बढ़ने के कारण व्यक्तिगत द्वन्द्व उत्पन्नहो रहा है। इस प्रकार की समस्या नई पीढ़ी के युवकों तथा युवतियों में उत्पन्न हो रही है।जिसे दो पीढ़ी का अन्तर भी कहते हैं। इस समस्या का कारण मूल्यों का ह्रास होना है।इस अध्याय में मूल्यों के दार्शनिक परिप्रेक्ष्य और शैक्षिक परिप्रेक्ष्य के की पृष्ठभूमि के बारे में विस्तृत वर्णन किया गया है।

Keywords:दार्शनिक, मूल्य, नैतिक

किसी दर्शन की व्याख्या करने में चार तत्वों की सहायता ली जाती है। इन्हें कुछ लोग दर्शन की समस्याएँ भी मानते हैं। परन्तु किसी दर्शन को पढ़ने के लिए निम्नलिखित चार पक्षों को पढ़ना भी आवश्यक होता है, वे इस प्रकार हैं:–

1. इसके अन्तर्गत सत्य के प्रत्यय का विवेचन किया जाता है।
2. यह ज्ञान के प्रत्यय की व्याख्य करता है और इसके द्वारा ज्ञान के स्रोतोंका बोध भी होता है।
3. यह ज्ञान के चयन के लिए आधार प्रदान करती है।

4. इसमें चिंतन से ज्ञान प्राप्त करने के साधनों का बोध होता है । दर्शन का एक विचारणीय क्षेत्र मूल्यमीमांसा है। यदि हम इसके विषय में सोचना बन्द कर दें तो हममें से अधिकांश लोग यह मानेंगे कि एक क्षेत्र तो सत्ता का है और दूसरा क्षेत्र मूल्य का है। हमारे अनुभव में आने वाली वस्तुओं का सत्ता सम्बन्धी पक्ष महत्वपूर्ण है किंतु हमारा अधिकांश अनुभव इन वस्तुओं के संयुक्त मूल्य से बना हुआहोता है।

पश्चिमी दर्शन के परिवार में मूल्यमीमांसा अन्य शाखाओं की अपेक्षा एक शिशु है यद्यपि इसकी जड़ें **प्लेटो, अरस्तु, सेंट टॉमस एक्विनस** और **स्पिनोजा** में विद्यमान है ।नीतिशास्त्र या नैतिक शुभ का सिद्धान्त दर्शन के अत्यधिक प्राचीन क्षेत्रों में से एक है औरसौन्दर्याशास्त्र या सौन्दर्य की विद्या ने दार्शनिकों को बहुत समय से ध्यान आकृष्ट किया है।लेकिन आधुनिक समय में अनेक व्यक्तियों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि इन क्षेत्रों तथा हमारेजीवन के अन्य मूल्य सम्बन्धी क्षेत्रों में व्याप्त एक सामान्य क्षेत्र है। यह विश्वास किया जाताहै कि इन विभिन्न मूल्यों सम्बन्धी क्षेत्रों को समझने में यह समान्य क्षेत्र कुंजी का काम करेगा।इसे मूल्यमीमांसा या एक्सियॉलॉजी का नाम दिया गया है। **एक्सियाँ का तात्पर्य है 'समानमूल्य का'**।

मूल्य क अनेक सिद्धान्त हैं और मूल्य के अनेक प्रकार भी हैं। स्वभावतः मूल्यके विभिन्न प्रकार अनेक हैं। दार्शनिकों ने अब तक जिन मूल्यों की ओर प्रत्यक्षतः अधिकध्यान दिया है वे हैं नैतिक, सौन्दर्यपरक, धार्मिक और सामाजिक मूल्य। कुछ अन्य मूल्यहैं आर्थिक, राजनैतिक, शैक्षिक उपयागिता सम्बन्धी मनोरंजनात्मक और स्वास्थ्य सम्बन्धीमूल्य।

मूल्यमीमांसा मूल्य के सिद्धान्तों को प्रकट करती है। मूल्यमीमांसा हमें ज्ञान औरसत्य के चयन के लिए आधार प्रदान करती है। मूल्यमीमांसा का सम्बन्ध जीवन की सत्यतासे होता है।

मूल्य मानक रूपी मानदण्ड है जिनके आधार पर मनुष्य अपने सामने उपस्थितक्रिया विकल्पों में से चयन करने में प्रभावित होते हैं और मूल्यों का चयन करते हैं ।

मूल्य समाज द्वारा स्वीकृत उन इच्छाओं और लक्ष्यों के रूप में परिभाषित किएजा सकते हैं जिन्हें अनुबन्धन, अधिगम या सामाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा आभ्यान्तरीकृत कियाजाता है और जो आत्मनिष्ठ अधिमान, मान तथा आकांक्षाओं का रूप धारण कर लेते हैं।

धर्मशास्त्र में नैतिक नियमों को मूल्य माना जाता है। हम जानते हैं कि प्रत्येकधर्म के कुछनैतिक नियम होते हैं और मनुष्य को उनका पालन जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में करनाहोता है। जब ये नियम मनुष्य के व्यवहार को नियन्त्रित एवं निर्देशित करने लगते हैं तबये उसके लिए मूल्य बन जाते हैं।

मानवशास्त्री मूल्यों को सांस्कृतिक लक्षणों के रूप में स्वीकार करते हैं उनकी दृष्टि से संस्कृति और मूल्य अभिन्न होते हैं, प्रत्येक संस्कृति अपने मूल्यों से ही पहिचानी जाती है ।

मूल्यों में सबसे अधिक चिंतन मनोवैज्ञानिकों और समाजशास्त्रियों ने किया है। मनोवैज्ञानिकों ने मूल्यों को मनुष्य की रूचियों, पसन्दों और अभिवृत्तियों के रूप में लिया है।**फ्लिंक महोदय के अनुसार**"हम जिसे पसन्द करते हैं और महत्व देते हैं, वे ही हमारे लिएमूल्य होते हैं।" मूल्यों का सन्दर्भ बिन्दु समाज के मानक होते हैं।

दर्शनशास्त्र में मनुष्य के जीवन के प्रति दृष्टिकोण को मूल्य की संज्ञा दी जातीहै । वेद मूलक दर्शनों के अनुसार मानव जीवन का चरम लक्ष्य मोक्ष है और चारवाक तथाआजीवक दर्शनों के अनुसार भौतिक सुख भोग। भारतीय दार्शनिकों की दृष्टि से मोक्ष और भोग दो भिन्न

मूल्य हैं। तभी तो मोक्ष में विश्वास रखने वालों का व्यवहार परमार्थ केन्द्रित होता है और भोग में विश्वास रखने वालों का स्वार्थ केन्द्रित होता है।

बिना मूल्यों के कोई अस्तित्व नहीं होता है। बिना अस्तित्व के कोई भी मूल्यनहीं होते हैं। जीवन में 'सत्य' किसी को भी मानें लेकिन उसके चिन्तन में तथ्यों में मूल्यनिहित होते हैं।

मूल्यों का महत्व तभी होता है जब उनकी वास्तविकता तथा महत्व को अनुभवकरें। 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' के अतिरिक्त किसी का भी अस्तित्व नहीं है। यह वास्तव मेंसत्य है। वैयक्तिकता का अस्तित्व मूल्यों से ही होता है।

व्यक्ति के आचरण से मूल्यों का बोध होता है कि उसका समायोजन कैसा है,उसकी अनुभूति कैसी है, उसका भावात्मक अनुभव किस प्रकार का है तथा मूल्यों में आनन्दकैसे लेता है। परमात्मा में मूल्य निहित है तथा वह अपने में पूर्ण है। उससे सभी सकारात्मकमूल्यों को प्राप्त कर सकते हैं और उसका आनन्द ले सकते हैं ।

उपरोक्त विवेचन से विदित होता है कि मूल्यों के प्रकारों का अध्ययन दर्शन,मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, धर्म संस्कृति में किया जाता है। मनोवैज्ञानिकों ने मूल्यों का वर्गीकरणकिया है। यदि मूल्यों के प्रकार की समीक्षा की जाए तो मूल्यों के प्रकार की लम्बी सूचीबन जायगी। दार्शनिकों ने इसे मूल्यमीमांसा का एक वृहद क्षेत्र माना है, परन्तु सभी ने अपने अपने ढंग से विवेचन किया है क्योंकि यह उनके 'सत्य' में मिलता है। दार्शनिक मूल्यमीमांसामें चार मूल्यों का ही उल्लेख किया है। यह चार मूल्य इस प्रकार हैः–

(1) नैतिक मूल्य या आचार संहिता मूल्य

(2) सौन्दर्यानुभूति मूल्य

(3) सामाजिक मूल्य

(4) धार्मिक मूल्य

कम से कम यह तो संभव ही है कि मूल्यों को तात्कालिक और परम मूल्यों केरूप में दो प्रकार का मानकर विचार किया जाए। जिन नैतिक शुभों को मैं अपने तात्कालिकअनुभवों में ढूँढ़ती हूँ उनका निश्चय घटनाओं के परिणामस्वरूप और परम शुभ के द्वारा होताहै। इस शुभ को मैं साध्य या लक्ष्य के रूप में सोचती हूँ जिसके लिए मैं सम्पूर्ण जीवनबिताती हूँ। यदि मैं तर्कवितर्क करती हू कि जीवन में प्रमुख शुभ सुख है तो अपने प्रतिदिन के आचरण में मैं उन क्रियाओं को चुनूँगी जो सर्वाधिक सुख प्रदान करें और क्रियाओं को बहिष्कृत कर दूँगी जो इस प्रकार मुझे पुरस्कृत न करें। यदि परम शुभ के रूप में मैं स्वयं की पूर्णता और यथासंभव पूर्णतम अनुभूति को मानती हूँ तो मैं उन वर्तमान क्रियाओं को चुनूँगी जो मेरे अपने पूर्णतम विकास और आत्मलाभ के लिए सर्वाधिक उपयुक्त होने का दावा करती हों। नीतिशास्त्र में यह नितान्त भिन्न अभिवृत्ति है।

वस्तुतः मैं संसार में किसी अनिवार्य शुभ के प्रति संशयवादी हो सकतो हूँ और यह विश्वास कर सकती हूँ कि कोई ऐसा निरपेक्ष आधार नहीं है जिस पर नैतिक निर्णयों कोआधारित किया जा सके। उस स्थिति में मैं यह अनुभव कर सकती हूँ कि जिस सामाजिकसमूह में मैं रहती हूँ उसकी स्वीकृति एक वर्तमान मूल्य है और इस प्रकार मैं यह देलूंगी कि मरा आचरण मेरे मित्रों और पड़ोसियों के द्वारा सामान्यरूपेण स्वीकृत आचरण का संवादी हो। अथवा मैं यह मान सकती हूँ कि प्रत्येक स्थिति में स्वीकार्य आचरण वह कार्य है जिससे मेरी व्यक्तिगत आवश्यकताएँ पूर्णरूपेण संतुष्ट हो जाती है और यह बहुजन हिताय भी है।

सौंदर्यपरक मूल्यसौंदर्यपरक मूल्यों को पता लगाकर समझना कुछ अधिक कठिन है। जो लोगइनका उपभोग करते हैं वे हममें से शेष लोगों को इन मूल्यों की प्रकृति को ठीक से बता नहींपाते, और हममें से जो लोग इन्हें समझते ही नहीं है वे इनका उपभोग करने वाले लोगों कीसंगति से रहित होते हैं। लेकिन फिर भी यह हो सकता है कि हम बिना जाने ही सौंदर्य के जैसी वस्तु का उपभोग कर रहे हो, या इन मूल्यों के अभाव का दण्ड भोग रहे हों और यह जानते ही न हों कि ऐसा क्यों है।

वस्तुओं का मूल्य समझने की एक विधि यह है कि ये वस्तुएँ हमें सूक्ष्म औरप्रायः अज्ञात भावना स्वरों को किस प्रकार जाग्रत कर देती हैं। सुन्दर सूर्यास्त हमारा उन्नयनकर सकता है या हमें भयभीत कर सकता है या हम इसमें रंग के उन प्रतिमानों को ढूँढ़ सकतेहैं जो हमें रूचिकर व आकर्षक लगते हैं। रेगिस्तान को मोटर से पार करते हुए मेरी माटरकारचक्कर काटती हुई प्रतीत हो सकती है और भूखण्ड उसी प्रकार दिखाई पड़ता हुआ मुझमें निर्जनता का भयावह भाव भर सकता है। एक बड़े नगर के किसी उपेक्षित भाग का मलिनदृश्य मुझमें निराशा का भाव भर सकता है और हम इस मलिनता से दूर भागने की इच्छा करसकते हैं। संगीत की अविरल लहरी से मैं राहत की साँस ले सकती हूँ और यह अनुभवकर सकती हूँ कि इस संसार में मैं भी आराम से हूँ और इसमें मुझे भी कुछ वास्तविक कार्यकरना है।

ये वे मूल्य हैं जिनकी ओर संभव है सामान्य रूप से ध्यान न दिया गया हो किन्तुसम्पूर्ण जीवन के किसी प्रयत्न में संभवतः इनको पहचानने और स्वीकार करने की योग्यताका विकास निहित है और यह भी निहित है कि उस रचनात्मक अभिवृत्ति की प्राप्ति में सहायताकी जाए जो हमारे अनुभव को इस प्रकार नियंत्रित करेगी कि यथासंभव अधिकतम अभीष्टसौन्दर्यपरक मूल्यों की अनुभूति की जाए।

हममे से अधिकांश लोग कम से कम सिद्धांत में तो मानते ही हैं कि व्यक्ति एकान्तमें नहीं रह सकता और इसे समाज से अवश्य संबंधित करना चाहिए। इस संबंध का क्षेत्रऐसा क्षेत्र है जिसमें सामाजिक मूल्य या तो प्राप्त होते हैं या अप्राप्त। हम में से प्रत्येक का यहाँतक कि सन्यासी का भी, कुछ न कुछ न्यूनतम संबंध रहता ही है। हम समाज में उत्पन्नहोते हैं और समाज के ही कारण हम जीविका अर्जित करते हैं या दान पर निर्भर रहते हैं।किन्तु सामाजिक क्षेत्र में मूल्य प्राप्ति की दिशा में बहुत लोग आगे नहीं बढ़ते। हम स्पष्टतः नहीं पता लगा पाते कि क्या प्राप्त करना ह और न ही हम यह जानते हैं कि पुरस्कृत होने योग्य सामाजिक प्रयासों में किस प्रकार लगा जाए।

सामाजिक मूल्य के किसी विशिष्ट सिद्धांत को न मानते हुए भी यह कहा जासकता है कि समाज से अच्छी तरह संबद्ध रहने में व्यक्ति मानव जीवन के सामान्य संदर्भके अंदर ही है। मनुष्य होते हुए, और मनुष्य की सभी भूख और क्षमताएं रखते हुए, उसके जीवन का सामान्य माध्यम मानव समाज ही है। यदि मनुष्य की समाज से छुटकारा पानेकी असामान्य इच्छा है तो भी वह मृत्यु के सिवाय समाज से अलग नहीं हो सकता औरयदि हमें से किसी को जीवन में उठना है और सर्वोत्तम कार्य करना है तो हमें दूसरे व्यक्तियोंके मित्र या पड़ौसी होने के नाते सभी अवसरों एवं दायित्वों का निर्वाह करना है। हमें उनकर्तव्यों को भी स्वीकार करना है जो सामान्य सामुदायिक जीवन के उत्तरदायी प्रतिभागी के रूपमें हमें निभाने हैं। इस सामुदायिक जीवन का क्षेत्र स्थानोय से लेकर सार्वभौमिक तक होसकता है। यही मार्ग है कुछ पुरस्कारों के प्राप्त करने का जिनमें से कुछ तो वैयक्तिकहोते हैं और दूसरे सभी सामान्य होते हैं और इन्हीं को सही माने में सामाजिक मूल्य कहा जासकता है।

हम में से अनेक लोग सौन्दर्यपरक मूल्यों की अपेक्षा धार्मिक अनुभव में व्याप्त मूल्योंको अधिक सरलता से समझते हैं, यद्यपि उनकी अनुभूति इतनी सरलता से हो सकती है, नहो हमारा जीवन आदतवश कलात्मक की अपेक्षा धार्मिक अधिक है और इसीलिए धार्मिकमूल्यों के चिन्तन के लिए हमारे पास कम से कम प्रत्यात्मक आधार तो है ही। यह बातसौंदर्यपरक अनुभव के लिए सच नहीं है।

हमारे धार्मिक मूल्य संभवतः हमारी तत्वमीमांसा पर आश्रित ह। इसका उल्लेखनीयअपवाद यह है कि धार्मिक अनुभव श्रुति का माध्यम भी हो सकता है और श्रुति तत्वमीमांसाको प्रभावित करेगी। लेकिन सामान्यतया हम ईश्वर में विश्वास न करने की स्थिति मेंधार्मिक अनुभव में उस प्रकार का मूल्य नहीं देख सकते हैं जिस प्रकार का मूल्य हम तबदेखेंगे जब ईश्वर में विश्वास करेंगे।

किसी श्रद्धालु द्वारा उपभोग किए जाने वाले कुछ मूल्य उनके तत्वमीमांसात्मकविश्वासों के अनुरूप इस प्रकार हो सकते हैं –

(1) उपासना, ईश्वर की पूजा में जीवन लाभदेखना।

(2) स्वीकृति, यह अनुभूति कि धार्मिक समुदाय से स्पष्टतः तादात्म्य स्थापित करनेमें आत्मन् का उच्चतर उद्देश्य प्राप्त हो जाता है।

(3) सहयोग, धार्मिक समूह के संयोग सेप्राप्त प्रेरणा की भावना।

(4) विश्वास, यह धारणा कि इस दृष्ट संसार के पीछे एक ईश्वरविद्यमान है जो पक्षी के हिलने–डुलने तक को देखता रहता है, और

(5) आशा, अत्यधिकआशावाद की यह भावना कि शुभ की अशुभ पर विजय होगी, कि आत्मा अमर है और यह कि एक वरदान प्राप्त समुदाय है जिसमें श्रद्धालु इस जीवन के बाद प्रवेश कर सकता है ।

नैतिक मूल्यों को जीवन की आचार संहिता भी मानते हैं। मूल्यों को तात्कालिक और परम मूल्यों के रूप में दो प्रकार का मानकर विचार किया जाए। जिन नैतिक शुभ संकेतों को मैं अपने तात्कालिक अनुभवों में ढूँढ़ती हूँ उनका निश्चय घटनाओं के परिणामस्वरूप और परम शुभ संकेत के द्वारा होता है। इस शुभ संकेत को मैं साध्य या लक्ष्य के रूप मेंसोचती हूँ जिसके लिए मैं सम्पूर्ण जीवन बिताती हूँ। यदि मैं तर्क–वितर्क करती हूँ कि जीवन में प्रमुख शुभ सुख है तो अपने प्रतिदिन के आचरण में मैं उन क्रियाओं को चुनूँगी जो सर्वाधिक सुख प्रदान करें और उन क्रियाओं को बहिष्कृत कर दूँगी जा इस प्रकार मुझे पुरस्कृत न करें। यदि परम शुभ संकेत के रूप में मैं स्वयं की पूर्णता और यथासम्भव पूर्णतम अनुभूति को मानती हूँ तो मैं उन वर्तमान क्रियाओं को चुनूँगी जो मेरे अपने पूर्णतम विकास और आत्म लाभ के लिए सर्वाधिक उपयुक्त होने का दावा करती हों। नीतिशास्त्र में यह नितान्त भिन्नअभिवृत्ति है।

कोई ऐसा निरपेक्ष आधार नहीं है जिस पर नैतिक मूल्यों का निर्धारण किया जासके। इस सन्दर्भ में यही सोचा जा सकता है कि हम जिस सामाजिक समूह में रहते हैं उसकोस्वीकृ ति ही मूल्य का आधार है। मेरा आचरण समाज को स्वीकार है उसी में नैतिक मूल्यनिहित हैं और मैं उस आचरण से संतुष्ट रहती हूँ।

नैतिक मूल्यों का विवेचन विभिन्न दार्शनिकों ने अपने–अपने ढंग से किया है।आदर्शवाद के अनुसार नैतिक मूल्यआदर्शवाद के अनुसार मूल्य केवल उन आत्माओं में तथा उन व्यक्तियों के हेतुवास्तविक हैं जिनको उनकी संवेदना होती है। 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' तथा इसी कोटि

की कोई वस्तुएँ या वृत्तियाँ वास्तव में नहीं होती है। मूर्त, सत्य, सुन्दरता की संवेदना देने वाली वस्तुएँ, संतोष देने वाली सामग्री अपने स्वयं के लिए होती हैं। व्यष्टित्व मूल्य का केन्द्र औरमाप दोनों हैं।

इम्मैनुअल कान्ट के बारे में **क्लिाफर्ड बैरेट कहता है कि "उसने आधुनिक जगत में दी गयी पूर्णतावाद की सर्वाधिक महत्वशाली अभिव्यक्ति का विकास किया है।"** क्योंकि एक आदर्शवादी का नीतिशास्त्र किसी न किसी रूप में पूर्णतावाद हो जाने कीसम्भावना रखता है, तो कान्ट के इसके सम्बन्ध में कथन को जो उसने अपनी "मैटाफिजिकऑफ मॉरल्स" में दिया है। अपने लिये नैतिक मूल्यों के आदर्शवादी व्यवहार काप्रतिनिधित्व करने देंगे। कान्ट के अनुसार कम से कम दो नैतिक मूल्य हैं जिनका स्वतः ही उनका अस्तित्व है–(1) व्यक्तिगत मूल्य तथा (2) नैतिक नियोग।

वर्तमान व्यक्तिगत एवं सामाजिक अनुभव के सादृश्य में इन दो मूल्यों के अलावा भी कम से कम चार अन्य ऐसे मूल्य हैं जो कि उनके द्वारा पूर्वानुमानिक हैं तथा जो मनुष्योंके द्वारा आदर्श रूप में सिद्ध किये जाते हैं। वे हैं–(1) सर्वव्यापी नैतिक नियमों के प्रतिआज्ञा पालन, (2) शुभ संकल्प, (3) साध्यों का समाज, तथा (4) अमरत्व ।

(1) **सर्वव्यापी नैतिक नियमों के प्रति आज्ञा पालन**–सर्वव्यापी नैतिक नियम वे नैतिकमान्यतायें हैं जो मानव सम्बन्धों में आवश्यक हो जाती हैं क्योंकि व्यक्तिगत मनुष्यव्यक्ति है।

(2) **शुभ संकल्प**–शुभ संकल्प एक ऐसा मूल्य है जो नैतिक नियमों की आवश्यकता तथा निरूपाधिक नियोग के तथ्य का अनुगमन करता है, क्योंकि मेरे पास बाह्य का अनुभव

है और क्योंकि तर्क बुद्धि मुझे आवश्यक नैतिक नियमों के प्रत्यभिज्ञान के योग्यबनाती है।

(3) साध्यों का समाज—साध्यों का समाज, जिसके बारे में 'कान्ट' कहता है कि यह एकवरदान प्राप्त समुदाय है, गीता में घोषित ईश्वर के राज्य के समान शुभ व्यक्तियों काएक समाज है। साध्यों का समाज एक मूल्य है जो इन दो में से निकलता है, एक तो यह तथ्य कि व्यक्ति है, तथा दूसरा कि सर्वव्यापी नैतिक नियमों कीआवश्यकता है।

(4) अमरत्व—साध्यों के समाज का अपनिगमन यह है कि व्यक्तिगत अमरत्व भी एक मूल्यहै परन्तु इसकी पूर्ति करना एक कठिन कार्य है।

अन्त में यह प्रश्न आता है कि नैतिक मूल्यों की प्राप्ति कैसे की जा सकती है?

इसके लिए सीधा उपाय है कि नैतिक नियमों का पालन किया जाए तथा इस प्रकारजोवनयापन करो, जिससे इन मूल्यों का आचरण हो सके।

(अ) इस प्रकार जीवन यापन करो कि सभी मनुष्यों के साथ व्यक्तियों के रूप मेंव्यवहार करो।

(ब) इस प्रकार जीवन यापन करो जैसे कि तुम स्वयं साध्यों के एक आदर्श समाजके सदस्य हो ।

कान्ट भी इसी विचारधारा से पूर्णतः सहमत हैं ।

प्रकृतिवादियों का सम्बन्ध जीवन मूल्यों से अधिक है क्योंकि प्रकृतिवादी विकासकी प्रक्रिया में विश्वास रखते हैं। यथार्थवादी एवं प्रयोजनवादी दोनों ने ही प्रकृतिवादियों केमूल्यों की समस्याओं के अध्ययन पर विशेष ध्यान दिया है ।

अब्राहम ऐदिल ने अपने 'प्रकृतिवाद और मानव–आत्मा' शीर्षक अध्याय में,जिसमें प्रकृतिवादी नैतिक लक्ष्यार्थ सिद्धान्त का वर्णन है, यहाँ तक प्रस्तुत किया है कि चयनका काम उसके कारणों पर अधिक आधारित हो सकता है और इसी प्रकार चयन कार्य केढंग के स्थान में भी उसका महत्व प्राप्त होता है, क्योंकि इससे सुख की प्राप्ति होती है। किसीव्यक्ति के कार्य से प्राप्त सुख की कसौटी यही है कि वह उसको वरीयता प्रदान करता हैऔर उसके चयन में निरन्तरता रहती है। इस विश्लेषण से सुख की प्रकृति पर अत्यधिकप्रकाश पड़ता है, जिससे स्पष्ट होता है कि सुख पर आधारित वरीयताओं से मूल्य के चयननिर्णीत होते हैं।

प्रकृतिवादी नैतिक मूल्यों के सन्दर्भ में प्राकृतिक मंगल और अमंगल घटनाओं काउल्लेख करते हैं, जो प्रकृति का उच्चतम पक्ष है। प्राकृतिक अमंगल घटनाएँ ऐसी स्थितियाँ हैं जिनसे बचना असम्भव है। प्रकृति की नैतिक दुर्घटनाओं को भौतिक अमंगल की संज्ञा दी जाती है। जैसे–भूकम्प, अकाल, महामारी, चक्रपात आदि। ये प्रकृति के अमंगल कार्य हैं जो मनुष्य के लिए संकट उत्पन्न करते हैं। जबकि मानव अपने जीवन में सुखचाहता है।

प्रकृतिवाद के अनुसार सुख ही उच्चतम श्रेय है और इसलिए उसको नैतिक निर्णयों का आधारित महत्व प्राप्त है। परन्तु यह सुख बहुत ही विलक्षण और अधिकांश प्रकृतिवादियों के विचार में अतीव परिमार्जित है। कोई व्यक्ति अपने नैतिक आचरण में जिस सीमा तक सतर्क प्रकृतिवादी होगा, वह अपने दैनिक जीवन में ऐसी नैतिक बातों का चयन करेगा, जिनके बल पर वह अपने को पूर्ण तथा निश्चल सुख और संतोष का अधिकारी घोषित कर सके। जिस

अमंगल की आशा की जाती है, उसका निवारण इस प्रकार से सम्भव है और निवारण की यह दशा प्रकृति की ही उपज है। मनुष्य की मनोवृत्ति अति अमंगल के प्रति निष्क्रिय निवारण के ही रूप में मिलती है। यद्यपि मानव समूहों क द्वारा अन्य मानवों पर सामाजिकअमंगल वृहद् रूप में पाये जाते हैं, तथापि यह आवश्यक नहीं है कि मनुष्य व्यक्ति के रूपमें अपने अथवा अपने पड़ोसी के प्रति अमंगल का कारण बनने का मूर्खतापूर्ण कार्य करनेका का प्रयास करें।

यथार्थवाद के अनुसार नैतिक मूल्ययथार्थवादियों ने मूल्य के सम्बन्ध में दो सामान्य विचार दिये हैं–(1) मूल्य एकऐसा तत्व है जिसकी परिभाषा करना कठिन है क्योंकि मूल्य हमारी अनुभूति का विषय मानाजाता है तथा (2) मूल्य संवेदनशील व्यक्तियों की अनुभूति पर निर्भर करता है। यथार्थवाद में नैतिक मूल्यों का उल्लेख मौटेगू ने किया है। वह कहते हैं कि इस सम्बन्ध में यह ध्यान रखना चाहिए कि उसकी तत्वमीमांसा में आध्यात्मिकता की वास्तविकता को स्वीकार किया गया है। इसके विपरीत कुछ यथार्थवादी अपने तत्वमीमांसा विश्वासों में प्रकृतिवादी है। मौंटेगू जान स्टूआर्थ ने नैतिक मूल्यों को स्वीकार किया है। उसके अनुसार नैतिक गुणों की उत्तमताको समाज के लाभ की दृष्टि से आंकना चाहिए। जो प्रसन्नता जितने ही अधिक लोगों को प्रसन्न करेगी वह उतनी ही बड़ी मानी जायेगी। उनका एक विश्वास है कि इस प्रकार कीपरिभाषा ही सबसे अच्छी परिभाषा है और यही नैतिक उपदेशों तथा आशाओं की शक्ति कोबढ़ा सकती है। जो भी आज्ञा, वचन या उपदेश दिये जा रहे हैं यदि उनका मूल्य सम्बद्धबात से कम नहीं है तो उसका प्रभाव अवश्य पड़ेगा। यथार्थवादियों ने जीवन की उपयोगिताएवं संसार के सुखों को भोगने की इच्छा को महत्व दिया है परन्तु साथ ही साथ उन्होंनेआध्यात्मिकता को भी महत्व दिया है।

मौंटेगू का विश्वास है कि इन दोनों उत्तम गुणों में सामंजस्य सम्भव है। उसकेअनुसार जहाँ मनुष्य में आध्यात्मिकता है वहाँ कामवासना भी है। यद्यपि आध्यात्मिकता कीपरिभाषा कामवासना से सम्बन्ध करके नहीं की जा सकती तथापि उसके सम्बन्ध में चर्चातो की ही जा सकती है। भोगेच्छायें क्षणिक होते हुए भी वास्तविक हैं और आध्यात्मिक भावनाकी अभिव्यक्त करने वाली हैं। किन्तु ये क्षणिक हैं और आध्यात्मिक भावनाएँ स्थायी प्रकृति की शक्ति में है। कामवासना भी हमारे अन्तःकरण का एक अंग है। किन्तु वह दिव्यात्मा की याद दिलाता है और हमें इस दिव्यात्मा का ही साक्षात्कार करना है। आत्माको इच्छा की स्थायी शक्ति मानना चाहिए और उसकी तृप्ति को आध्यात्मिक आवश्यकताओंका स्थायी प्रयोग मानना है। ये एक–दूसरे के लिए ऐसी ही हैं जैसे कि केन्द्र वृत्त के लिएहोता है ।

प्रयोजनवाद के अनुसार नैतिक मूल्यप्रयोजनवाद में अनुभव को अधिक महत्व दिया गया है, जिसके अन्तर्गत तीन बातें–भाषा, व्यक्तियों में आत्मत्व तथा आत्मत्व की सामाजिक उपयोगिता। इनसे मूल्य उत्पन्न हो सकते हैं। अनुभव ही मूल्यों के अस्तित्व का आधार है परन्तु यह अन्तिम आधार नहींह क्योंकि यह परिवर्तन की क्रिया में विश्वास रखते हैं और मूल्य के लक्षण भी बदलते रहते हैं।

प्रयोजनवादी मूल्य–सिद्धान्त के दो सामान्य पहलू हैं, जिनकी रूपरेखा अभी प्रस्तुतकी गई है। वास्तव में, जिस प्रकार से मूल्य प्रत्येक दूसरे क्षेत्र में हैं, उसी प्रकार नैतिक क्षेत्रमें भी लागू होते हैं। नैतिक मूल्यों के अस्तित्व का आधार वैयक्तिक सामाजिक जीवन–प्रक्रियासे निर्मित होता है, जिसमें आत्मायें दूसरी आत्माओं और समूहों से भाषा के माध्यम सेसंलाप–सम्बन्ध में होती हैं। साथ ही निर्देशक सिद्धान्त, जो नैतिक मूल्य की ओर ले जाता है, यह है कि अनिश्चित स्थितियों के नैतिक पहलुओं में मूल्य की प्राप्ति इस ढंग से कार्य

करने में हो सकती है जो संतोषपूर्ण ढंग से अनिश्चित तत्वों का समाधान कर दे और साथ ही आने वाली स्थितियों के अत्यधिक संतोषजनक नियन्त्रण के लिए मार्ग निर्देशनकर दें।

जॉन डीवी के अनुसार नैतिक समस्याओं के प्रति दो सामान्य दृष्टिकोण हैं। कुछ लोग दोनों दृष्टिकोणों में से एक पर दूसरे की अपेक्षा अधिक बल देते हैं। लेकिन दोनों को मिलाकर एक ऐसा स्पष्ट रूप दिया जाना सरल नहीं है। जिससे दोनों पर एक ही समय में बल दिया जा सके। एक ओर यह कहा जाता है कि नैतिक मूल्यों में महत्वपूर्ण बात यह है कि मनुष्य के अभिप्राय शुभ हों।

नैतिकता के इन दोनों दृष्टिकोणों का पालन, सहकालिक रूप से एक ही प्रारम्भकर्ता द्वारा होता है, उदाहरणार्थ जैसा विद्यार्थियों की कक्षा में होता है, तो द्वंद्व बिल्कुल तीव्र हो सकता है। क्योंकि एक ओर बच्चे द्वारा सही भावनायें या शुभ अभिप्राय रखने के कारण उच्च मात्रा की प्रशंसा उसे दी जा सकती है, लेकिन उसी समय उससे आशा कीजाती है कि शुभ अभिप्राय का मूल्य उतना ही नहीं है जितना बाह्य विचार प्रभाव सुझाव देना चाहते थे।

जॉन डीवी का विचार है कि आन्तरिक और बाह्य रूपों की यह आवश्यक एकतातब उपलब्ध होती है जब प्रत्येक स्थिति पर जो हमें प्रभावित करती है। हम फिर नवीन स्थितिके रूप में विचार करते हैं, जब इस विचार प्रयत्न के अन्तर्गत अभिप्रायों को साध्य स्वयं नमानकर संक्रियात्मक उपकरणों के रूप में माना जाता है। जो फलदायक कार्यों में निहित होसकते हैं और जब ऐसे कार्यो को, जो फलदायक इसलिए हैं क्योंकि वे स्थिति के पूर्ण अनुकूल होते हैं, जैसे वे हैं उस रूप में देखा जाता है। तब जो परिणाम अभिप्रायों से निहित हो चुकेहैं, उनका जन्म स्थिति में हो जाता है।

प्रयोजनवाद के नतिक मूल्य में आदर्शवादी और प्रकृतिवादी दोनों की मूल्यमीमांसाको सम्मिलित किया गया है। प्रयोजनवाद दोनों का मध्य मार्ग है ।

प्रत्ययवादी दृष्टकोण से ज्ञान की वृद्धि एवं विकास, चाहे व्यक्तिगत मन में होया प्रजाति के अनुभव में, विस्तारवाद दृश्य का विषय है जिससे कि व्यष्टियों तथा वर्गो कोउनके वृहत्तर एवं अधिक पूर्ण सम्बन्धों में देखा जाता है। सीमित विकास के तथा न्यूनपरिपक्वता के मन के प्रति अनुभव साकल्यों का विषय है जो कि नितान्त सचेतनापूर्वक उनको साकल्यों में बनाने वाले जटिल अन्तर सम्बन्धों में किसी अंतदृष्टि अथवा उसके गुण विवेचन के बिना स्वीकार कर लिये जाते हैं। जितना अधिक ज्ञान विकसित होता है उतना हीअधिक विश्लेषण एवं संश्लेषण होता है तथा साकल्यों को अन्तरः सम्बन्धित अंशों से निर्मितहुये रूप में गहनतर अंतदृष्टि से देखा जाता है। मुझमें अंतदृष्टि के जन्म एवं विकास सेपूर्व वे भेदहीन साकल्य थे जिनके प्रति मैं अपेक्षाकृत मानसिक अंधता से अनुक्रिया करती थी। अब यद्यपि अन्वेषण हेतु मेरे पास सदा अधिक जटिल शाखायें एवं सम्बन्ध होंगे, तो भी वे भेदहीन साकल्य होंगे । मैनें कम से कम मानसिक रूप से तो उन्हें उनके संवद्ध अंशों में विभाजित कर दिया है, तथा उनको पुनः साथ–साथ रख दिया है। इससे उनका अधिक पूर्णता से गुण विवेचन होता है।

मूल्य का सामान्य सिद्धान्त जो कि प्रत्ययवादी दर्शन की एक प्राकृतिक अभिव्यक्ति है, निम्नलिखित तीन तर्कवाक्यों को स्पष्ट करके रेखांकित किया जा सकता हैः–

1. वे सिद्धान्त, जिनको मानव प्राणी इच्छा करते हैं तथा आधारभूत रूप से जिनका आनन्द लेते हैं, अस्तित्व में समाये हुये हैं, वे वास्तविक अस्तित्वमान है ।

2. मानव जीवन के मूल्य वही है जो कि वे वृहतरूप से हैं क्योंकि उन पर अधिकार करने के लिये तथा उनका आनन्द लेने के लिए व्यष्टिगत व्यक्ति हैं ।

3. एक महत्वपूर्ण मार्ग जिसके द्वारा व्यष्टिगत व्यक्ति मूल्य की सिद्धि कर सकते हैं, अंशों और सांकल्यों के सक्रिय सम्बन्धों के द्वारा है ।

मूल्य के बारे में ये तीन कथन आवश्यक नहीं कि एक मूल्य मीमांसा की रचना करते हुये ये आवश्यक रूप से संगत ही हों? किन्तु मूल्य का एक सिद्धान्त बनाने हेतु इनको संगत बनाया जा सकता है तथा इनको इसी कार्य के हेतु एक साथ बाँधा जा सकता है।'कांट' के अनुसार कम से कम दो नैतिक मूल्य है, जो स्वतः ही अस्तित्व में जड़ेंजमाये हुये हैं। ये (1) व्यक्ति एवं (2) नैतिक नियोग हैं।

वर्तमान व्यक्तिगत एवं सामाजिक अनभव के सादृश्य में इन दों मूल्यों के अलावा भी कम से कम चार अन्य ऐसे मूल्य है जो कि उनके द्वारा पूर्वानुमानित हैं तथा जो मनुष्यों के द्वारा आदर्श रूप में सिद्ध किये जाते हैं। वे हैंः–(1) सर्वव्यापी नैतिक नियमों के प्रति आज्ञापालन, (2) शुभ संकल्प, (3) साध्यों का सामाज एवं (4) अमरत्व। इन मूल्यों के लिए व्यावहारिक अक्षर लिखा जाना चाहिये कि हम इन नैतिक मूल्यों की सिद्धि कैसे करसकते हैं। एक सीधा–सादा उपदेश जो कि इसको एक शुष्क नियम में समेट लेता है, वहहै "नैतिक नियम का पालन करो।" जीवन के इस नियम के कम से कम दो अर्थ निकलतेहैं तथा इस संबद्ध नियमों में अधिक जीवन है, तथा वे महानतर उष्णता से स्पंदन कर रहे हैं। वे हैंः–(1) "इस भाँति जीवित रहो कि सभी मनुष्यों के साथ व्यक्तियों के रूप मेंव्यवहार करो", तथा (2) "इस भाँति जीवित रहो जैसे कि तुम स्वयं साध्यों के एक आदर्शसमाज के सदस्य हो।" जैसा 'कांट' की मणियों में से एक उपदेश हमें देती है।

इस भॉति कार्य करो जैसे कि तुम अपने स्वयं के व्यक्ति में, साथ ही साथ प्रत्येकअन्य के व्यक्ति में, तुम मानवता के साथ भी, एक साध्य के रूप में व्यवहार कर रहे हो,उसको कभी भी एक साधन के रूप में नहीं समझ रहे हो।

मनुष्य के जीवन में कभी–न–कभी ऐसी भी स्थितियाँ आती हैं जिनसे काल कीदृष्टि से व्यक्तिगत और सामाजिक दोनो ही रूपों में भिड़ना पड़ता है, फिर भी ऐसी स्थितियाँभी होती है जो अपेक्षाकृत अधिक लम्बी अवधियों के बाहर फैली हुई होती है। इसका एकमूर्त उदाहरण लीजिये–परिवार के अगली बार के भोजन के लिए रूपया उधार लेना यद्यपिअनिश्चित स्थिति है जिसम कोई सच्ची खोज हो सकती है। इसी प्रकार की स्थिति जगतके पूर्व और पश्चिम में वर्तमान विभाजन के द्वारा निर्मित हो जाती है और यह स्थिति ऐसी है कि इसमें समस्त मानव जाति फँसी हुई है और समय की अपेक्षाकृत ऐसी लम्बी अवधि में फैली हुई है कि जिसकी लम्बाई स्वयं अनिश्चित है।

सर्वप्रथम मूल्य कहाँ से आते हैं और उनके अस्तित्व की मूल कहाँ हैं? उत्तरमें यह कहा जा सकता है कि व्यावहारिकतावाद मूल्यों की परिभाषा ऐसे नहीं करता है, मानोंउनका अस्तित्व किसी निरपेक्ष या परम ढंग से हो। इसके विपरीत मूल्यों का अस्तित्व व्यक्तिगत सामाजिक क्रियाओं के उनके संबंध के सदर्भ में होता है। उनका अस्तित्व उसी सीमा तक होता है जिस सीमा तक घटनाओं के व्यक्तिगत सामाजिक प्रवाह में वे कार्य करते या प्रभावपूर्ण क्रियाशीलता के साथ होते हैं । नैतिक मूल्यों के अस्तित्व का आधार वैयक्तिक, सामाजिक जीवन प्रक्रिया सेनिर्मित होता है, जिसमें आत्मायें दूसरी आत्माओं और समूहों से भाषा के माध्यम से संलाप संबंध में होती है। साथ ही निर्देशक सिद्धान्त, जो नैतिक मूल्य की ओर ले जाता है, यह है कि अनिश्चित स्थितियों के नैतिक पहलुओं में मूल्य की प्राप्ति इस ढंग से कार्य करने मेंहो

सकती है जो संतोषपूर्ण ढंग से अनिश्चित तत्वों का समाधान कर दें और साथ ही आनेवाली स्थितियों के अत्यधिक संतोषजनक नियंत्रण के लिये मार्ग निर्देशन कर दे।

इन बाह्य और आन्तरिक पहलुओं की वास्तविक एकता जो व्याघात से मुक्त हो,फिर भी स्पृहणीय होती है। अभिप्रायों को स्थिति के अनुकूल होना चाहिये और उचित व्यवहारोंमें प्रक्षेपित होने के पूर्व इन्हें दंभ नहीं करना चाहिये। साथ ही व्यवहार को स्थिति के अनुकूलहोना चाहिये लेकिन इसे भावनाओं और दृष्टि बिन्दुओं से सम्बन्ध–विच्छेद नहीं करना चाहिये, जिनके द्वारा नैतिककर्ता उचित कार्यों की भावना में प्रवेश करता है। 'डीवी' का तर्क है किआन्तरिक और बाह्य रूपों की यह आवश्यक एकता तब उपलब्ध होती है, जब प्रत्येक स्थिति पर जो हमें प्रभावित करती है, हम फिर से नवीन स्थिति के रूप में विचार करते हैं, जब इस विचार प्रयत्न के अन्तर्गत अभिप्रायों को साध्य स्वयं न मानकर संक्रियात्मक उपकरणों के रूप में माना जाता है। जो फलदायक कार्यों में उद्‌गत हो सकते हैं और जब ऐसे कार्यो को, जो फलदायक इसलिये हैं क्योंकि वे स्थिति के पूर्ण अनुकूल होते हैं, जैसे वे हैं उस रूप में देखा जाता है, तब जो परिणाम अभिप्रायों से उद्‌गत हो चुके हैं उनका जन्म स्थिति में होजाता है।वास्तवादियों में मूल्य के सम्बन्ध में कम से कम दो सामान्य सिद्धान्त हैंः– (1)मूल्य साधारण एवं अपरिभाष्य तत्व हैं। हम इनका अनुभव करते हैं तब ये हमारी अनुभूतिमें आते हैं। (2) मूल्य संवेदनशील व्यक्तियों की अभिप्रवृत्ति पर निर्भर रहते हैं ।

उपसंहारः–

इन सिद्धान्तों में से पहले सिद्धान्त का आशय है कि हम अनेक गुणों का अनुभवकरते हैं। इनमें से कुछ को हम तरजीह देते या चाहते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि उनगुणों में वह योग्यता होती है जिनके कारण हम उन्हें तरजीह देते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः–

1. **एन.सी.ई.आर.टी. (2002)**ऑनोटटेड बिब्लीओग्राफी ऑन वैल्यु एज्यूकेशन इन इण्डियन एन.सी.ई.आर.टी, नई दिल्ली।

2. **लोकेश (2001)**शैक्षिक अनुसंधान विधियाँ, विकास पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

3. **गुप्त, एन.एल. (1987),** वैल्यू एजुकेशन थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस, गांधी मार्ग, प्रकाशक, कृष्णा ब्रदर्स पब्लिकेशन, अजमेर।

4. **गुप्त, एन.एल. (1997),** मूल्य परक शिक्षा, गांधी मार्ग, प्रकाशक, कृष्णा ब्रदर्स पब्लिकेशन, अजमेर।

5. **गैरिट, हेनरी ई. (1997),** स्टैटिस्टिक इनसॉयकॉलौजी एण्ड एजुकेशन, नोएडा।

6. **चक्रवर्ती, मोहित (1997),** वैल्यू एजुकेशन चैलेंजिंग पर्सपैक्टिव, कनिक्षा पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

7. **पाण्डे, बृजेश कुमार (2002),** मूल्यपरक शिक्षा वर्तमान परिदृश्य भारतीय आधनिक शिक्षा, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली।

8. **पासी, बी.के.एन., एवं सिंह पी. (1991),** वैल्यू एजुकेशन,कचहरी घाट, नेशनल पब्लिकेशन, आगरा।

9. **पाण्डे रामशकल (2001),** शिक्षा के मूल सिद्धान्त, विनोद प्रकाशन, आगरा।

10. **बुच, एम.बी. (2000),** फिफ्थ सर्वे ऑफ एजुकेशन रिसर्च, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली।

11. **भारत सरकार (2000),** वैल्यू एजुकेशन इन इण्डियन एसोसिएशन ऑफ इण्डियन यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली।

12. **राजपूत, जे.एस. (2002),** वैल्यू एजुकेशन इन इण्डियन स्कूल एक्सप्रियन्स एण्ड स्टेडीज़ ऑफ इम्प्लीमेण्टेशन, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली।

13. **वेंकटा, एन. (1998),** वैल्यू एजुकेशन दरियागंज, एपीएच पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

14. **सक्सेना, डॉ0 सरोज (2004–2005),** शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार, आगरा।

15. **टिलमैन, जे.एस. (2002),** वैल्यू एजुकेशन इन इण्डियन स्कूल एक्सप्रियन्स एण्ड स्टेडीज़ ऑफ इम्प्लीमेण्टेशन, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली।

16. **शर्मा, पंडित विष्णु (2005),** हितोपदेश, प्रकाशक, कोहिनूर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।

17. **गोयल, गीतिका (2004),** दादा–दादी की कहानियाँ, प्रकाशक डायमण्ड पॉकेट बुक्स प्राईवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।

18. **देव, योगेश्वर (2000),** नैतिक शिक्षा, प्रकाशक, होलीफेथ इण्टरनेशनल प्राईवेट लिमिटेड।

19. **सुमन, एम.जी. एवं मिश्र राजेश कुमार (2003),** कहानियों का खजाना, मुम्बई, नवनीत पब्लिकेशन, एन.सी.ई.आर.टी. प्राईमरी टीचर वॉल्यूम–30, नवम्बर, 3–4, जुलाई एवं अक्टूबर (2005) इण्डिया लिमिटेड।